विचार संगम

भारतीय दर्शन, विज्ञान, साहित्य-कला और तकनीकी के विशेष संदर्भ में

सम्पादक
डॉ. दिनेश चन्द्र शर्मा

विचार संगम

भारतीय दर्शन, विज्ञान, साहित्य-कला और तकनीकी के विशेष संदर्भ में

सम्पादक :

डॉ. दिनेश चन्द्र शर्मा

Ph.D., D.Lit. (Sub.)

निदेशक, कॉम्पिटिशन प्लस ग्रुप ऑफ इन्स्टीट्यूशन,

अजमेर

Books n Books

51/1509, आचमन, वेदविहार,

लोहाखान, अजमेर-305001

प्रकाशक :
पुष्पा शर्मा
Books n Books
51/1509, आचमन, वेदविहार,
लोहाखान, अजमेर-305001
ई-मेल : bnbajmer@gmail.com

संस्करण
प्रथम 2025

ISBN : 978-81-993854-0-5

मूल्य - 400/-

रचना - विचार संगम-भारतीय दर्शन, विज्ञान, साहित्य-कला और तकनीकी के विशेष संदर्भ में

सम्पादक - डॉ. दिनेश चन्द्र शर्मा

मुद्रक - श्रीनिवास प्रिन्टोग्राफिक्स, अजमेर

17

वेदों में नारी-गरिमा, शिक्षा और स्थिति

रतनलाल कुमावत
सहायक आचार्य (शिक्षा विभाग)
हुकुमचन्द नोबल इंस्टीट्यूट ऑफ साईंस एण्ड टेक्नोलॉजी, अजमेर

वेदकालीन युग में नारी को समाज का प्रेरणास्रोत और आध्यात्मिक शक्ति का प्रतीक माना गया है। उसे केवल गृहस्थ जीवन की सीमाओं में बाँधकर नहीं देखा गया, बल्कि राष्ट्र और संस्कृति के निर्माण की समान सहभागी के रूप में सम्मान दिया गया।

वेदों में नारी को यह संदेश दिया गया है कि वह अज्ञान, आलस्य और तामसिकता की बेड़ियों को तोड़कर अपने भीतर की दिव्यता को जागृत करे, ज्ञान और सत्य की किरणें फैलाए। वह समाज में सोए हुए पुरुषार्थहीन लोगों को कर्मपथ पर चलने की प्रेरणा दे, निर्धनों के लिए अन्न-साधन जुटाए, यज्ञ-विहीनों को यज्ञकर्म के प्रति प्रवृत्त करे और संकुचित दृष्टि वालों में उदारता का संचार करे।

ऋग्वेद की उषा-सूक्त में स्त्री को प्रभात की देवी उषा के रूप में वर्णित किया गया है जो अंधकार मिटाकर संसार को जगाती है। यही प्रतीक बताता है कि स्त्री समाज में ज्ञान-जागरण की मूर्ति है। वह केवल घर की मर्यादा नहीं, बल्कि पूरे राष्ट्र की जागृति का आधार है।

वेदकालीन नारी शिक्षित थी — उसे वेद, ब्रह्मविद्या, गणित, खगोल, संगीत, चिकित्सा आदि विषयों का ज्ञान प्राप्त करने का अधिकार था। लोपामुद्रा, घोषा, अपाला, विश्ववारा, रोमशा जैसी ऋषिकाओं ने वेद-मंत्रों की रचना की, जो नारी की बौद्धिक स्वतंत्रता और शिक्षा-समानता का प्रमाण हैं।

वेदों में नारी को यज्ञकपरी, पूजास्पदा, सत्यमयी, महिमामयी और दिव्यमयी कहा गया है — अर्थात् वह ईश्वर की उपासना और समाज-निर्माण दोनों की धारक है। वह केवल पुरुष की सहचरी नहीं, बल्कि उसकी समान कार्यकर्ता और जीवन की सहनिर्मात्री है।

इस प्रकार वेदों की दृष्टि में नारी गरिमा, शिक्षा, संस्कार और शक्ति का केंद्र है। जहाँ नारी का सम्मान होता है, वहाँ समाज में धर्म, संस्कृति और समृद्धि का वास होता है।

वेदों में नारी को विद्या, सत्य, नीति और सृजन-शक्ति का प्रतीक माना गया है। उसे गृहस्थी की सीमा में नहीं, बल्कि ज्ञान और यज्ञ की प्रेरक के रूप में सम्मान दिया गया है।

वेद मंत्रों में नारी को सरस्वती, उषा और गायत्री की उपमा देकर कहा गया है कि वह अपने ज्ञान-प्रकाश से समाज को जाग्रत करे, अंधकार और द्वेष का नाश करे, तथा मधुर वाणी, सद्विचार और सुनीति का संचार करे।

वह विदुषी, उपदेशिका और शिक्षिका के रूप में गृह, समाज और राष्ट्र — तीनों की उन्नति का आधार है। वेदकालीन युग में नारी को शिक्षा, यज्ञ, चर्चा और नेतृत्व के समान अधिकार प्राप्त थे।

वेदों में नारी को जीवन की आधारशक्ति और ज्ञान का स्रोत माना गया है।

त्वे विश्वा सरस्वति श्रितायूषि देव्याम्।
शुनहोत्रेषु मत्स्व प्रजां देवि दिदिड्ढि नः।।

इस मंत्र में कहा गया है कि समस्त प्राणियों का जीवन विदुषी नारी पर आश्रित है, क्योंकि वह सबको योग्य शिक्षा प्रदान करती है। वह ज्ञानीजनों में आनंद प्राप्त करती है और अज्ञानी प्रजा को शिक्षा देकर जाग्रत करती है।

सरस्वति देवनिदो नि बर्हय प्रजां विश्वस्य बृसयस्य मायिनः।
उत क्षितिभ्योऽवनीरविन्दो विषमेभ्यो अस्रवो वाजिनीवति।।

इस मंत्र में नारी से अपेक्षा की गई है कि वह अपने ज्ञान और सदाचार से समाज से अविद्या, निन्दा और अधर्म की प्रवृत्तियों को दूर करे, तथा लोगों के भीतर वेद-वाणी और सत्प्रेरणा का संचार करे। वह ज्ञान का सरिता-स्वरूप है — जैसे नदी जल को प्रवाहित करती है, वैसे ही नारी ज्ञान-रस* को समाज में प्रवाहित करती है।

नारी को वेदों में अनेक पवित्र नामों से पुकारा गया है —

'आपः' — स्नेह और शुद्धता की प्रतीक,
'सरस्वती' — ज्ञान और वाणी की अधिष्ठात्री,
'उषा' — प्रकाश और जागरण की प्रतीक,
'अदिति' — अखण्डता और स्वतंत्रता की प्रतीक,
'पृथिवी' — सहनशीलता और स्थिरता का रूप,
'विद्युत्' — तेज और ऊर्जा की दात्री,
'अम्बा' — स्नेहमयी उपदेशिका,
'देवी' — दिव्य गुणों की मूर्ति।

वेदों की दृष्टि में नारी त्याग, दया, क्षमा, सत्य, धर्म और कर्म की मूर्त प्रतिमा है। वह न केवल जीवनदात्री, बल्कि समाज की शिक्षिका, प्रेरिका और रक्षक है।

वेदों में नारी को तेजस्विनी, सन्मार्गप्रेरिका और सौभाग्यदायिनी कहा गया है। वह उषा की भाँति समाज को जाग्रत करती है और मनुष्य को यश, ज्ञान व धर्म के मार्ग पर ले जाती है।

नारी 'नृपत्नी' है — पुरुषार्थी जनों की सहधर्मचारिणी, जो प्रेम, रक्षा, और शास्त्रश्रवण से परिवार का कल्याण करती है। उसे 'अच्छिन्नपत्रा' कहा गया है, अर्थात् वह स्वतंत्र रूप से उन्नति करने की अधिकारिणी है।

वेदों के विवाह-मंत्रों में स्त्री को पुरुष की समान सहचर माना गया है, जो अग्नि को साक्षी मानकर गृहाश्रम के धमज़ में सहभागी होती है।

वेदों के मंत्रों में विवाह-संवाद के माध्यम से स्त्री-पुरुष की समानता, श्रद्धा और बौद्धिक एकता का सुंदर चित्रण मिलता है।

नारी अपने वर को केवल जीवनसाथी नहीं, बल्कि मनन-चिन्तन और ज्ञानयात्रा का सहचर मानती है।

हृदे त्वा मनसे त्वा दिवे त्वा सूर्याय त्वा।
ऊर्ध्वोऽअध्वरं दिवि देवेषु धेहि।।

वह कहती है — मैं तुम्हें हृदय, मन, बुद्धि और सूर्य के समान तेजस्विता के लिए वरण करती हूँ।

नारी अपने पति को 'सहस्रगुणसम्पन्न विद्वान्' कहकर सम्मान देती है और स्वयं भी उस ज्ञान, विवेक और मेधा में सहभागी बनती है।

अग्नेऽभ्यावर्त्तिन्नभि मा निवर्त्तस्वायुषा वर्चसा प्रजया धनेन।
सन्या मेधया रय्या पोषेण।।

इस मंत्र में वह वर से प्रार्थना करती है कि वह दीर्घायु, तेजस्वी, धर्मनिष्ठ, दानशील और विद्या-समृद्ध होकर सदैव अनुकूल रहे।

भगस्य नावमा रोह पूर्णामनुपदस्वतीम्।
तयोपप्रतारय यो वरः प्रतिकाम्याः।।

नारी अपने वर से कहती है कि — आप धर्म, विद्या, कीर्ति और ऐश्वर्य की नाव पर आरोहण करें और मुझे भी उसी से पार कराएँ। अर्थात् विवाह केवल सांसारिक बंधन नहीं, बल्कि जीवन-साधना और आत्मोन्नति की संयुक्त यात्रा है।

इसके बाद गृहाश्रम-यज्ञ का उल्लेख आता है —

प्रेतु ब्रह्मणस्पतिः प्र देव्येतु सूनृता।
अच्छा वीर नर्यं पङ्क्तिराधस देवा यज्ञं नयन्तु नः।
मखाय त्वा मखस्य त्वा शीर्ष्णे।
मखाय त्वा मखस्य त्वा शीर्ष्णे।

मुखाय त्वा मखस्य त्वा शीर्ष्णे।।

आप गृहाश्रम-यज्ञ, धमज़्यज्ञ, और तप-स्वाध्यायरूप यज्ञ के शिर:स्थान पर स्थित हों। यह दर्शाता है कि गृहस्थ जीवन स्वयं एक यज्ञ है, जिसमें पति-पत्नी मिलकर धर्म, अध्ययन और सेवा करते हैं।

फिर मंत्र कहता है —

अक्ष्यौ नौ मधुसंकाशे अनीकं नौ समञ्जनम्।

अन्तः कृणुष्व मां हृदि मन इन्नौ सहासति।।

हमारी आँखें मधुर हों, हमारा मन एक हो, हम सदा प्रेमपूर्वक साथ रहें। यह वैदिक दांपत्य की आत्मिक एकता, परस्पर स्नेह और समान भाव की सुंदर अभिव्यक्ति है।

अंत में, जब वर पाणिग्रहण करता है, तो यह केवल एक रीतिक्रम नहीं, बल्कि वचन और संकल्प का आध्यात्मिक प्रतीक है जहाँ अग्नि साक्षी है, वेदमंत्र मार्गदर्शक हैं, और दोनों आत्माएँ एक जीवन-यज्ञ में सहभागी बनती हैं।

इन वैदिक मंत्रों में विवाह के पश्चात् पति-पत्नी के संयुक्त जीवन, कर्म, आचरण और सामाजिक उत्तरदायित्व की दिशा दी गई है।

मंत्र में आशीर्वाद है कि —

अभि वर्धता पयसाभि राष्ट्रेण वर्धताम्।

रय्या सहस्रवर्चसेमौ स्तामनुपक्षितौ।।

वधू-वर दूध और राष्ट्रभावना से बढ़ें, ऐश्वर्य व तेज में समृद्ध रहें। अर्थात् उनका जीवन पवित्रता, समृद्धि और राष्ट्रहित से ओतप्रोत हो।

मंत्र में कहा गया है —

अश्विनो पुरुदससा नरा शवीरया धिया।

धिष्णाया वनतं गिरः।।

हे वधू-वर! कर्मनिष्ठ और बुद्धिमान बनो, वेद और विद्वानों की वाणी का सतत सेवन करो। यह पति-पत्नी दोनों के लिए विद्याप्रेम और सतत साधना की प्रेरणा है।

निम्न मंत्र में स्त्री के आचरण का विधान है —

अधः पश्यस्व मोपरि, संतरां पादकौ हर।

मा ते कशप्लकौ दृशन्, स्त्री हि ब्रह्मा बभूविथ।।

हे स्त्री! विनम्र रहो, मर्यादित रहो, क्योंकि तू यज्ञ की ब्रह्मा है। यह स्त्री की पवित्रता, मर्यादा और गृहयज्ञ में ब्रह्मस्वरूप भूमिका का बोध कराता है।

यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते, रमन्ते तत्र देवताः।

यत्रैतास्तु न पूज्यन्ते, सर्वास्तत्राफलाः क्रियाः।।

श्लोक में कहा गया है — जहाँ नारियाँ पूज्य होती हैं, वहाँ देवता निवास करते हैं; जहाँ उनका अपमान होता है, वहाँ सब कर्म निष्फल हो जाते हैं। यह भारतीय संस्कृति के नारी-सम्मान और आध्यात्मिक संतुलन की सर्वोच्च घोषणा है।

श्लोक (शंकराचार्य कृत) में माँ के अत्यन्त कष्टपूर्ण प्रसव-काल और त्याग का वर्णन करते हुए कहा गया है कि —

आस्तां तावदियं प्रसूतिसमये दुर्वारशूलव्यथा
नैरुच्ये तनुशोषणं मलमयी शय्या च सांवत्सरी।
एकस्यापि न गर्भभार-भरणक्लेशस्य यस्याः क्षमो
दातुं निष्कृतिमुन्नतोऽपि तनयस्तस्यै जनन्यै नमः।।

कोई भी पुत्र, चाहे कितना ही महान क्यों न हो जाए, माता के गर्भ-भार वहन के कष्ट का प्रतिदान नहीं दे सकता। इसलिए माता को सर्वोच्च वंदनीय कहा गया है।

श्लोक में गुरु-पिता-माता की तुलना करते हुए कहा गया है कि —

उपध्यायाद् दशाचार्यः, आचार्याणां शातं पिता
पितुर्दशशतं माता, गौरवेणातिरिच्यते।।

माता का गौरव सबसे अधिक है — वह पिता से भी हजार गुना श्रेष्ठ है।

आगे वैदिक गृहस्थ-जीवन के सन्दर्भ में कहा गया है कि —

अयज्ञियो वा एष योऽपत्नीकः।

बिना पत्नी के पुरुष यज्ञ का अधिकारी नहीं होता।

पुरुषो ह जायां वित्त्वा कृत्स्नतरमिवात्मान् मन्यते।

पत्नी पाकर पुरुष स्वयं को पूर्ण और संपूर्ण अनुभव करता है।

नारी के कर्तव्य एवं सम्मान पर कहा गया है कि —

पुरुषो ह जायां वित्त्वा कृत्स्नतरमिवात्मान् मन्यते।

पति ही नारी का देवता, बन्धु और गुरु है; उसे प्राण देकर भी प्रिय रखना चाहिए।

अर्धं भार्या मनुष्यस्य, भार्या श्रेष्ठतमः सखा।
भार्या मूलं त्रिवर्गस्य, भार्या मूलं तरिष्यतः।।

उक्त मंत्र में नारी के स्थान का सर्वोच्च निर्धारण करते हुए कहा गया है कि —

स्त्री पुरुष का अर्धांग है, श्रेष्ठ सखा है, धर्म-अर्थ-काम का मूल और मोक्ष का साधन है।

स्त्री के लिए पति और पुरुष के लिए पत्नी पूजनीय है। जहाँ स्त्रियाँ वेदोक्त दिव्य गुणों से युक्त होती हैं— जैसे संयम, अहिंसा, सत्य, नम्रता, विद्या, प्रेम और शुभकामना, वहाँ समस्त समाज में प्रसन्नता, शांति और उन्नति अवश्य होती है।

वेद मंत्रों में बताया गया है कि स्त्री को चाहिए कि — वह पति और देवर आदि के प्रति मन, वचन और कर्म से अहिंसा व विरोधरहित रहे। सभी के कल्याण की कामना करे, यहाँ तक कि पशुओं के लिए भी कल्याणकारी बने। संयमपूर्ण जीवन, सत्य, अहिंसा, अस्तेय आदि यमों का पालन करे। तेजस्विनी बने, उत्तम सन्तान उत्पन्न करे और उन्हें श्रेष्ठ शिक्षा दे। परिवार में सौहार्द और सुख की दायिनी बने।

अर्चत प्रार्चता नरः प्रियमेधासो अर्चत।

अर्चन्तु पुत्रका उत पुरमिद् धृष्णवर्चत।।

मंत्र में कहा गया है कि नर-नारी दोनों को प्रेम और श्रद्धा के साथ परमेश्वर की उपासना करनी चाहिए तथा उनके पुत्रों को भी उसी मार्ग पर चलाना चाहिए।

सन्तान हेतु वेद की प्रार्थना यजुर्वेद 33/77, सामवेद म. 1525 में इस प्रकार करने का निर्देश है-

उप नः सूनवो गिरः शृण्वन्त्वमृतस्य ये। सुमृडीका भवन्तु नः।।

माता-पिता को यह प्रार्थना करनी चाहिए कि उनके पुत्र वेदरूप अमृत परमेश्वर की वाणी का श्रवण करें, उसके आदेशों का पालन करें और इस प्रकार सद्गुणी तथा सुखदायक बनें। पति-पत्नी को यज्ञ एवं संस्कार एक साथ करने चाहिए ताकि सन्तान पर अच्छे संस्कार पड़ें और वह धार्मिक, संयमी व सत्यनिष्ठ बने।

अथर्ववेद (7/36/1) में पत्नी कहती है-

अन्तः कृणुष्व मां हृदि मन इन्नौ सहासति।।

आप मुझे अपने हृदय में स्थान दें; हमारा मन सदा एक रहे। यह सच्चे आत्मिक प्रेम और मानसिक एकता का प्रतीक है।

आशासाना सौमनसं प्रजां सौभाग्यं रयिम्।

पत्युरनुव्रता भूत्वा सं नह्यस्वामृताय कम्।।

अथर्ववेद (14/1/42) में पत्नी से कहा गया है कि वह पति की अनुव्रता बने अर्थात् उसके अनुकूल आचरण करे, प्रेम, सौभाग्य और धर्म में साथ दे।

साथ ही, अथर्ववेद (7/38/4) में पत्नी के मुख से पति को यह व्रत दिलाया गया है—

ममेदसस्त्वं केवलो नान्यासां कीर्तयाश्चन।।

आप केवल मेरे ही रहें, अन्य स्त्रियों की ओर दृष्टि या कीर्तन न करें।

वेदों के अनुसार दाम्पत्य जीवन पारस्परिक प्रेम, निष्ठा और आत्मिक एकता पर आधारित है। पति-पत्नी का संबंध केवल लौकिक नहीं, बल्कि धार्मिक और यज्ञमय बंधन है, जिसका उद्देश्य है — सद्गुणी सन्तान, संस्कारित परिवार और धर्ममय समाज का निर्माण।

वेदों में नारी की स्थिति और उसकी गरिमा का अत्यंत गूढ़ और दिव्य वर्णन मिलता है। मंत्रों में यह स्पष्ट कहा गया है कि परमेश्वर के ज्ञान और कर्म, दोनों विधान ही मनुष्य के सुख के साधन हैं। जो पुरुष उस सर्वज्ञ परमात्मा की मैत्री को स्वीकार करता है, वही बुद्धि और उन्नति प्राप्त करता है। वेद के मंत्रों में प्रयुक्त 'त्रसदस्यव' और 'मंहिष्ठ अर्थी सत्पतिः' जैसे विशेषण किसी लौकिक राजा के नहीं, बल्कि परमेश्वर के हैं। इसी प्रकार 'सोभरिः सोभरयः' जैसे पदों से तात्पर्य उन ज्ञानी उपासकों से है जो परमात्मा की कृपा से सुखदायक इन्द्रियाँ, प्राण, अन्तःकरण और बलादि गुणों से युक्त होते हैं। इन उपासकों की शक्तियाँ प्रतीक रूप में पचास वधुओं के रूप में वर्णित हैं, जिनसे जीवन में ज्ञान, बल, विद्या और सुख की प्राप्ति होती है। 'वधू' शब्द का अर्थ ही है—जो सुख प्रदान करे, अतः ये सभी वधुएँ मनुष्य के आंतरिक बलों और दैवी सामर्थ्य का प्रतीक हैं।

वेदों में नारी का प्रतीकात्मक चित्रण पृथिवी, उषा, नदी और गौ के नामों द्वारा किया गया है। ये नाम केवल प्राकृतिक शक्तियों के ही नहीं, बल्कि नारी के गुणों के भी द्योतक हैं। पृथिवी के रूप में नारी कर्मशील, क्षमाशील, रक्षक, विशाल और पूज्य है। उषा के रूप में वह ज्ञानमयी, शुभ नेत्री, ऐश्वर्यशालिनी, बलवती और मधुरभाषिणी है। नदी के रूप में वह गतिमान, शुद्ध, अग्रगामिनी, विद्यारसपूर्ण और मातृवत् है। गाय के रूप में वह अहिंसनीय, दायिनी, अपराजेय और सामर्थ्यशालिनी है।

निष्कर्षतः इन सभी उपमाओं के माध्यम से वेद यह प्रतिपादित करते हैं कि नारी केवल गृहिणी या परिवार का अंग नहीं, बल्कि सृष्टि के संचालन की मूल प्रेरणा है। उसमें पृथिवी की स्थिरता, उषा की जागृति, नदी का प्रवाह और गौ का पोषणभाव सब निहित हैं। वह ज्ञान, शक्ति, करुणा और मातृत्व की मूर्ति है। इस प्रकार वेद नारी को विश्व की रचना और पोषण करने वाली दिव्य शक्ति के रूप में प्रतिष्ठित करते हैं, जो ईश्वर की सृष्टि में संतुलन और समरसता का प्रतीक है।